पृष्ठ-संख्या १२३ से १३७

## षष्ठ अध्याय

## सां स्कृ ति क चे त ना

० सांस्कृतिक चेतना स्वरूप

० आधुनिक काव्य में सांस्कृतिक चेतना

० दिनकर का सांस्कृतिक दृष्टिकोण

० दिनकर की सांस्कृतिक चेतना

०००० अतीत वर्णन

सांस्कृतिक आदर्श

- नि ष्क र्ष

## षाष्ठ अध्याय

## सां स्कृ ति क चे त ना

प्रत्येक देश की अपनी एक विशाल संस्कृति होती है । अपनी संस्कृति के प्रति हर एक को बडा नाज रहता है । देश अपने देशवासी तथा देश की संस्कृति से जुडा हुआ रहता है । जीवन के सूक्ष्म एवं व्यापक सत्यों की भाँति संस्कृति की कोई निश्चित और सीमित परिभाषा करना कठिन है । ''संस्कृति का संबंध संस्कार से है । संस्कृत अवस्था का नाम ही संस्कृति है । संस्कृति की व्याख्या इस प्रकार भी हो सकती है कि सामाजिक जीवन की आंतरिक मूल प्रवृत्तियों का सम्मिलित रूप ही संस्कृति है ।''[१] संस्कृति को प्राप्त करने के लिए जीवन के अंत:स्थल में प्रवेश करना पडता है । स्थूल आवरण के पीछे सूक्ष्म का जो सत्य , शिव और सुंदर रूप छिपा हुआ है, संस्कृति उसको ही पहचानने का प्रयत्न करती है । जडता से चैतन्य की ओर , शरीर से आत्मा की ओर , रूप से भाव की ओर बढना ही उसका ध्येय है । यह संस्कृति की आंतरिक धारणा है । '' संस्कृति का व्यक्त रूप सभ्यता अर्थात आचार, विचार, विश्वास, परंपराएँ , शिल्पकौशल्य और माध्यम है कला, साहित्य आदि ।''[२] प्रत्येक देश या जाति की अपनी विशेष सामाजिक प्रेरणाएँ अपनी आशा-आकांक्षाएँ अपने विश्वास हैं । अत: उसकी अपनी विशेष संस्कृति भी होती है । जिस पर उसकी जलवायु, भौगोलिक स्थिति, उसकी ऐतिहासिक परंपराओं का प्रभाव होता है ।

इस विशाल भारत देश की भी अपनी एक विशाल संस्कृति है । भारतीय संस्कृति विश्व की अत्यंत प्राचीन संस्कृति है और कदाचित सब से पूर्ण । हमारी संस्कृति के सिद्धांतों और आदर्शों से प्रभावित होकर अन्य देशवासी भी यहाँ

---

१. ' साकेत ' - एक अध्ययन - डॉ. नगेंद्र, पृ. ७० ।

२. वही, पृ. ७० ।

आकर हमारी संस्कृति का अध्ययन कर अपने चरित्र का निर्माण किया करते थे। और वे पुन: अपने देश में पहुँचकर , अन्य लोगों के भी चरित्र का निर्माण किया करते थे । भारतीय संस्कृति विशाल मानवतावादी संस्कृति है । इस संस्कृति ने दुनिया की सभी संस्कृतियों को अपने में समा लिया है । जिस प्रकार छोटी-छोटी नदियाँ मिलकर एक बहुत बडा समुद्र बनता है, उसी भाँति हमारी संस्कृति है । इस संस्कृति का मूल मंत्र भी कितना उदात्त है, जो दुनिया के सभी प्राणी मात्र के प्रति प्रेम रखता है ।

'' सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वे सन्तु निरामया: ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:ख भाग् भवेत ।।''

संस्कृति जीवन का समग्र रूप है । उसमें दर्शन, कला, जीवन के आचार विचार, नीति नियम, रहनसहन, संस्कार आदि का भी समावेश होता है । कवि की संस्कृति के प्रति समग्र जीवन दृष्टि उसकी सांस्कृतिक चेतना है । सांस्कृतिक एकता राष्ट्रीयता को सुदृढ बनाने की दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण होती है । क्योंकि समान सांस्कृतिक परंपरा रखनेवाले लोगों में ही पारस्परिक एकता के भाव उभरते हैं और यही सांस्कृतिक चेतना राष्ट्र को बल प्रदान करती है ।

आधुनिक काव्य में सांस्कृतिक चेतना :

आधुनिक काल में सांस्कृतिक चेतना जनजागरण के उद्देश्य से निर्माण हुई। भारतेंदु हरिश्चंद्र युग के प्रतिनिधि कवि भारतेंदु ने ' भारत भिक्षा ', ' विजयिनी विजय पताका ' आदि कविताओं में देश की अतीत गौरव गाथा कहकर भारतवासियों में नवजागरण की भावना जागृत की है । भारत जब अपनी दीन-हीन दशा पर आँसू बहा रहा था तब भारतेंदु युगीन कवि अपनी अतीत की समृद्धि और गौरव की गाथा के द्वारा देश को नई चेतना प्रदान कर रहे थे । भारतेंदु कभी भारत के प्राकृतिक सौंदर्य एवं वैभव का स्मरण करते हैं तो कभी अतीत

के महापुरुषों को याद करते हैं । जिन्होंने इस देश को गौरव प्रदान करके भारत की संस्कृति को ऊँचा उठाया था । अपने प्राचीन वैभव की स्मृति को पुनर्जीवित करते हुए जन-जीवन में क्रांति एवं विद्रोह की आग सुलगाने का प्रयास भारतेंदु ने किया है । इसी युग के बद्रीनारायण चौधरी ' प्रेमघन ' ने ' प्रेमघन सर्वस्व ' में भारतीय संस्कृति के प्रति आत्मीयता प्रकट करते हुए सबको अपने देश, भाषा, आचार विचार, रीति रिवाज और वेशभूषा को अपनाने का अनुरोध किया था । राधाकृष्णदास ने अपनी ग्रंथावली में गौरवमय अतीत को स्मरण करते हुए सुनहरे भविष्य की कामना की है । इस प्रकार भारतेंदु युग के कवियों ने भारत के उज्ज्वल अतीत को वर्ण्य विषय बनाकर सांस्कृतिक चेतना द्वारा जनजागरण का कार्य किया ।

द्विवेदी युगीन कवियों ने अपनी वर्तमान दशा की तुलना में उज्ज्वल अतीत का अनेक कविताओं में मुक्त कंठ से ज्ञान किया । हिंदुओं के उत्थान तथा गौरवमय अतीत का सजीव चित्रण गुप्त जी ने ' भारत भारती ' में किया है । आर्य जैसे श्रेष्ठ पूर्वजों के हम वंशजों को अध:पतित देखकर कवि को दु:ख होता है । इसी युग के गोपालप्रसाद सिंह अपनी रचना ' माधवी ' तथा ' संचिता ' में गौरवशाली भारतवर्ष के अतीत पर प्रसन्नता व्यक्त करते हैं । सियारामशरण गुप्त ने मौर्य विजय में भारत के चारित्रक उत्कर्ष की भावना व्यक्त की है । तथा भारत की विजय गाथा का अंकन किया है । द्विवेदी युगीन कवियों की सांस्कृतिक चेतना भी जनजागरण का कार्य करती है । छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद ने ' स्कंदगुप्त ' नाटक में गौरवमय भारत का चित्रण किया है । साथ में देश की प्राकृतिक सुषमा का वर्णन करते हुए देश के लिए सर्वस्व त्याग की भावना प्रद-र्शित की है । छायावादी कवि निराला ने अपनी अनेक कविताओं में भारत की श्रेष्ठ प्राचीन संस्कृति का गौरव किया है । उदयशंकर भट्ट ने तक्षशिला में भारत के प्राचीन वैभव का सौंदर्यपूर्ण चित्रण किया है । सुभद्राकुमारी चौहान ने

अपनी प्रसिद्ध कविता ' वीरों का कैसा हो वसंत ' में अतीत की ज्वलंत स्मृतियों के चिंतन द्वारा वर्तमान हताश जीवन में संजीवनी भरने का काम किया । छायावादोत्तर युग के कवियों की सांस्कृतिक चेतना पर गांधी दर्शन का विशेष प्रभाव रहा । गांधी जी ने किसी नवीन वाद का निर्माण नहीं किया । उनका जीवन दर्शन भारत की प्राचीन संस्कृति का ही एक संस्करण मात्र है । उन्होंने चिरकाल से आच्छादित भारतीय संस्कृति के आवरण को हटाकर उसके स्वच्छ प्रेममय मानवी स्वरूप को पुन: मानव मात्र के संमुख प्रस्तुत किया । गांधी के इस दर्शन का प्रभाव परोक्ष रूप से तत्कालीन हिंदी कवियों पर पडा । गांधीवादी विचारधारा से प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित कवि सियाराम शरण , सोहनलाल द्विवेदी , सुमित्रानंदन पंत और बच्चन हैं ।

दिनकर का सांस्कृतिक दृष्टिकोण :

दिनकर ने ' संस्कृति के चार अध्याय ' नामक बृहद् ग्रंथ का निर्माण किया। दिनकर ने संस्कृति की व्याख्या इस प्रकार की है । -- '' संस्कृति जिंदगी का एक तरीका है । यह वह चीज मानी जाती है जो हमारे सारे जीवन को व्यापे हुए है तथा जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभवों का हाथ है । ''[३] पाँच हजार वर्षों के इतिहास को दिनकर ने चार क्रांतियों में बाँटा है । दिनकर ने अपनी इस कृति में स्पष्ट किया है कि भारतीय संस्कृति एक ही है, वह न आर्य संस्कृति है और न द्रविड संस्कृति , न उत्तर की संस्कृति न दक्षिण की । उसकी जडें अतीत की अतल गहराइयों में हैं । अतएव भयानक झंझावात भी उसकी जडें अतीत की नहीं हिला सके । दिनकर मानते हैं कि भारत की राजनीतिक राष्ट्रीयता उसकी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की देन है । भारत की प्रगति का मार्ग राजनीति और संस्कृति के मिलन का मार्ग है ।

---

३. दिनकर का रचना संसार, क्षोटेलाल दीक्षित, पृ.१० ।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

दिनकर ने संस्कृति की व्याख्या करते हुए कहा है -- '' संस्कृति सुख नहीं, सदाचार है । संस्कृति ताकद नहीं विनम्रता है । संस्कृति संचय नहीं , त्याग है । संस्कृति विजय नहीं मैत्री है और सब से बढकर संस्कृति की चरम साधना अहिंसा में प्रकट होती है । ''[४]

दिनकर की सांस्कृतिक चेतना :

दिनकर में हम भारतीय संस्कृति के प्रति अनंत मुग्धता एवं श्रद्धाभाव पाते हैं । '' दिनकर की कविता में हमें यदि बुद्ध का संदेश स्वर ध्वनित है तो इतिहास के सुनहले पृष्ठों से आर्य युग का ऐश्वर्य, गुप्त युग की उपलब्धि , मुगल-कालीन विलास वैभव और राजपूती आनबान की झाँकियाँ भी हैं, किंतु इन कथाओं का निष्कर्ष युगीन स्वातंत्र्य यज्ञ में आहूति देने की चेतना जगाना ही है । ''[५]

सावित्रि सिन्हा ने कहा है -- '' उन्होंने इतिहास को काव्य में ध्वनित करने की चेष्टा की । वर्तमान की चित्रपटी पर अतीत को संभाव्य बनाया । ''[६]

इस प्रकार दिनकर की सांस्कृतिक चेतना इतिहास के संदर्भों से संपृक्त और अतीत गौरव से अनुस्यूत होकर वर्तमान जीवन की समस्याओं का हल ढूँढ निकालने में तत्पर रही है । दिनकर की सांस्कृतिक चेतना संस्कृति के विविध आधार लेकर प्रकट हुई है ।

१. गौरवशाली अतीत-वर्णन :

भारत का अतीत बडा उज्ज्वल रहा है । अतएव उसकी परंपराएँ अमूल्य हैं,

---

४. वट-पीपल - दिनकर , पृ. ६५ से उद्धृत ।
५. राष्ट्रकवि दिनकर और उनकी साहित्य साधना, प्रेमचंद जैसवाल, पृ.४४।
६. युगचारण दिनकर - सावित्री सिन्हा, पृ. ४७ ।

भारतीयों को उनपर गर्व है । सच्चा कवि स्वदेश की संस्कृति, उसके अतीत और स्वर्णिम इतिहास से संजीवनी लेकर अपनी रचना प्राणवान बनाता है । दिनकर इस दृष्टि से सच्चे कवि हैं । रेणुका की कई कविताओं में अतीत का चित्रण किया है । कवि ने अतीत के चित्रण द्वारा वर्तमान जीवन में प्राण भरने का प्रयास किया है ।

दिनकर के अनुसार पराधीन राष्ट्र के लिए अतीत की उदात्त कल्पना आवश्यक है । अतीत से वर्तमान को शिक्षा लेनी चाहिए । अतीत कालीन वीरों का ' त्याग ' हमारे वर्तमान को तीव्रता प्रदान करता है । शिवबालक राय कहते हैं-- '' दिनकर के काव्य में अतीत को वाणी मिली है । इतिहास साकार होकर हमारे सामने अवतरित हुआ है । खंडहारों के हृदय को प्रतिध्वनित और अनुप्राणित करनेवाले हिंदी साहित्य में ऐसे कितने कवि हैं । दिनकर की अतीत-भावना कहीं भगवान बुद्ध की दिव्य आत्मा से आलोकित है, कहीं मौर्य और गुप्त के भव्य ऐश्वर्य से मुखरित है, कहीं मुगलकला विलास से विकसित है और कहीं राजपूती शान और शौर्य से उद्घोषित है । ''[७]

रे णु का :

दिनकर की सांस्कृतिक चेतना सर्वप्रथम ' रेणुका ' काव्य संग्रह के 'हिमालय' में पाई जाती है । ' हिमालय ' को कवि ने पौरुष का प्रतीक माना है । यहाँ कवि पुरानी संस्कृति का स्मरण करता हुआ अतीत और वर्तमान के असंतुलन को इंगित करता है । हिमालय हिंदुस्थान का द्वार रक्षक है । कवि उसे भारतमाता का हिमकिरीट , भारत का दिव्य भाल जैसे शब्दों से संबोधित करता है । भारतीय संस्कृति में ऋषि -मुनियों के लिए बहुत ही आदरणीय और उच्च स्थान

---

७. दिनकर - प्रो. शिवबालक राय , पृ.२९ ।

है । दिनकर को हिमालय तपस्या में लीन यति की तरह दिखाई देता है । हमारी संस्कृति में नदियों को पवित्र माना है । गंगा नदी तो हमारे सारे पाप नष्ट करनेवाली है । ये जड नदियाँ नहीं भारतीय जीवन के प्रेरक हैं ।

'' सुखसिंधु , पंचनद , ब्रह्मपुत्र ,
गंगा यमुना की धार ।
जिस पुण्यभूमि की ओर बही,
तेरी विगलित करुणा उदार । '' [८]

कवि
यहाँ अतीत कालीन सांस्कृतिक पृष्ठों को पलटता हुआ एक एक कर सभी आदर्शों को हमारे सम्मुख उपस्थित करता है । उसे राजस्थान के उन वीर योद्धाओं की याद आती है जो स्वतंत्रता का दीपक लेकर वन- वन भटकते रहे । कवि आदर्श शासक राम , घनश्याम, अशोक, चंद्रगुप्त का स्मरण करते हुए हिमालय से पूछता है --

'' तू पूछ, अवध से, राम कहाँ ?
वृंदा, बोलो घनश्याम कहाँ ?
ओ मगध ? कहाँ मेरे अशोक ?
वह चंद्रगुप्त बलधाम कहाँ ? '' [९]

जिस गौतम बुद्ध ने अपने मंगल उपदेश से तिब्बत, ईरान, जापान को प्रभावित किया था , हिंदुस्तान के सांस्कृतिक स्तर को दुनिया में ऊँचा उठाया था, कवि उनका भी स्मरण करता है । आज उसी वैभवशाली देश को संकट में फँसा हुआ देखकर कवि हिमालय से अनुरोध करता है--

---

८. रेणुका - दिनकर, तृ. सं. पृ. ५ ।
९. वही, पृ. ६ ।

'' तू मौन त्याग कर सिंहनाद
रे तपी ! आज तप का न काल ।
नव-युग शंखध्वनि जगा रही,
तू जाग , जाग मेरे विशाल । ''[१०]

इस प्रकार कवि अतीत कालीन महत्त्व के नगरों, शासकों, धर्माचार्यों एवं शूरवीरों का स्मरण करके जन जागरण करना चाहते हैं । अतीत के आदर्श वह इस उद्देश्य से प्रेरित होकर उपस्थित करता है कि उनकी तरह देश के लिए मर मिटने की प्रवृत्ति का सब में निर्माण हो ।

' बोधिसत्व ' में कविजिसके स्वर में युगधर्म हुंकारित हुआ था, जिसने ऐश्वर्य का त्याग करके विश्व का उद्धार किया, जिसने हिंदु संस्कृति में एक महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त कर लिया है । ऐसे महान तपस्वी गौतम बुद्ध के त्यागमयी जीवन के सामने नतमस्तक होकर लिखता है --

'' तप की आग, त्याग की ज्वाला में प्रबोध संधान किया,
विष पी स्वयं, अमृत जीवन का तृषित विश्व को दान किया।
वैशाली की धूल चरण चूमने ललक ललचाती है,
स्मृति- पूजन में तप कानन की लता पुष्प बरसाती है । ''[११]

' मिथिला ' में कवि भारत के ऐतिहासिक गौरव और वर्तमान दुर्दशा का चित्रण करता है । रामायण भारतीय जीवन और संस्कृति के आदर्शों का प्रतिनिधित्व करता है । भारतीय आदर्श नारी सीता का गौरवगान मिथिला के द्वारा कवि इस प्रकार करता है ।

---

१०. रेणुका - दिनकर, तृ. सं. पृ. ८ ।
११. वही, पृ.१७ ।

" मैं जनक- कपिल की पुण्य-जननि ,
मेरे पुत्रों का महा ज्ञान ।
मेरी सीता ने दिया विश्व
की रमणी को आदर्श- दान । " [१२]

'पाटली पुत्र की गंगा ' में कवि ने मगध और वैशाली का गौरव गान करके अतीत के द्वारा वर्तमान को सचेत करने का प्रयास किया है । वीर शासक चंद्रगुप्त , समुद्रगुप्त , अशोक आदि को कवि स्मरण करता है । उन खंडहरों को देखकर कवि कल्पना करता है कि इस तबाही पर गंगा सिसकियाँ ले रही है । वह व्यथित कंठ से गुप्तवंश का गौरवगान गाने लगती है । उसके कानों में गौतम का उपदेश गूंज उठता है । उसकी आँखों के सामने चंद्रगुप्त का विजय साकार होता है , जिसके सामने सेल्यूकस ने भी हार मानी थी । एक जमाने में सारी दुनिया हमारे सामने झुकती थी । वे दिन लौट कर कब आएँगे, इसका कवि को इंतजार है ।

" जगती पर छाया करती थी
कभी हमारी भुजा विशाल,
बार बार झुकते थे पद पर
ग्रीक यवन के उन्नत भाल । " [१३]

गौरवशाली अतीत की याद से कवि में नव चैतन्य निर्माण होता है वह उजडे हुए गुलशन को फिर से महकते हुए देखना चाहता है ।

" खंडहर में सोयी लक्ष्मी का
फिर कब रूप सजाओगे ?
भग्न देव मंदिर में कब
पूजा का शंख बजाओगे ? " [१४]

---

१२. रेणुका - दिनकर, तृ. सं. पृ. २१ ।
१३. वही, पृ. २५ ।
१४. वही, पृ.२७ ।

' कस्मै देवाय ' में कवि दिल्ली, मिथिला , नालंदा, वैशाली में पुराने वैभव को ढूँढने का प्रयत्न करता है । वैभव के विद्रूप खंडहरों को देखकर कवि का मन आर्तक्रंदन कर उठता है । भारतीय संस्कृति आदर्श जीवनमूल्यों पर आधारित है । जब उन मूल्यों को कोई क्षति पहुँचाने का प्रयास करता है तो कवि आक्रोश करता है --

'' गूँज रही संस्कृति-मंडप में
भीषण फणियों की फुफकारें,
गढते ही जाते हैं,
भाई के वध हित तलवारें । '' [१५]

विशाल भारतीय संस्कृति में इस्लाम संस्कृति, ईसाई संस्कृति का समावेश हो गया है । वह उसका एक अभिन्न अंग बन गया है । कवि वैभव की समाधि में मुगलकालीन वैभव का स्मरण करके न्यायप्रिय अकबर की याद दिलाता है --

'' जयदीप्ति कहाँ अकबर के
उस न्याय मुकुट मणिमय की ?
क्षिप गई झालक किस तम में
मेरे उस स्वर्ण उदय की । '' [१६]

जीवन का आदर्श ( रश्मिरथी )

कर्ण :

रश्मिरथी में आदर्श चरित्र है कर्ण । उनके चरित्र के अध्ययन से जीवन के

---

१५. रेणुका - दिनकर , तृतीय संस्करण, पृ. ३० ।
१६. रेणुका - दिनकर , तृ. संस्करण , पृ.१०६ ।

आदर्श पर सम्यक प्रकाश पड़ता है । रश्मिरथी का कथानक महाभारत से लिया गया है । महाभारत भारतीय संस्कृति का अमूल्य ज्ञान भंडार है । उसमें राजनीति, समाज नीति, धर्मनीति , इतिहास , भूगोल आदि समस्त विषयों पर प्रकाश डाला है । आर्य जाति के आचार- विचार, व्यवहार और धर्म का रहस्य , अर्थ-शास्त्र, नियामक कामशास्त्र, वर्णाश्रम के सामान्य और विशेष धर्म, पिता-पुत्र, पति-पत्नी , गुरु-शिष्य , राजा-प्रजा आदि के पारस्परिक धर्म, राजनीति, युद्धकला, विविध कौशल आदि सब विषयों को एक साथ महाभारत में पाया जाता है । ऐसे भारतीय संस्कृति के आगार महाभारत से दिनकर ने कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी आदि काव्यों की रचना की है । कर्ण के जीवन की विभूति है दान। दान का महत्त्व भारतीय संस्कृति में अत्यधिक पाया जाता है । दान करना मनुष्य का प्रकृत धर्म है । दान तथा तपस्या की महिमा यहाँ गाई है । कर्ण की दानशीलता का वर्णन करते हुए कवि कहता है --

" फहर रही थी मुक्त चतुर्दिक यश की विमल पताका,
कर्ण नाम पड़ गया दान की अतुलनीय महिमा का ।
श्रद्धा सहित नमन करते सुन नाम देश के ज्ञानी,
अपना भाग्य समझ भजते थे उसे भाग्यहत प्राणी । " १७

दान और कर्ण दोनों पर्यायवाची हो गए हैं । भारतीय संस्कृति के आदर्श का कर्ण एक प्रतीक बन गया है । मनुष्यता का आदर्श तपस्या के भीतर ही पलता है । जो स्वयं अग्नि में निडर होकर जलता है वही संसार को प्रकाश देता है ।

दान की महिमा गाता हुआ कवि कहता है कि जीवन का प्रवाह दान की शक्ति ही से निरंतर चलता रहता है । भारतीय संस्कृति उदात्त विचारों से

---

१७. रश्मिरथी - दिनकर , द्वितीय संस्करण , पृ. ५६ ।

भरी हुई है। उसमें अभिमान के लिए स्थान नहीं है। हम किसी को दान दें तो हम में अभिमान की मात्रा न आनी चाहिए। बल्कि हमें यह समझना चाहिए कि यह उस मनुष्य की कृपा है जो हमारा दान स्वीकार कर रहा है। कवि ने दान के साथ आत्मत्याग को जोडा है। जो मनुष्य दान देकर आत्मत्याग करता है, वह सार्थक बनता है। उसका नाम अमर होता है। भारतीय संस्कृति के आत्मत्यागी महापुरुषों का दृष्टांत कवि ने यहाँ दिया है। --

'' व्रत का अंतिम मोल राम ने दिया,त्याग सीता को,
जीवन की संगिनी, प्राण की मणि को, सुपुनीता को,
दिया अस्थि देकर दधीचि ने ,शिवि ने अंग कतर कर,
हरिश्चंद्र ने कफन माँगते हुए सत्य पर अड कर। ''[१८]

इस प्रकार मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने सीता का त्याग करके व्रत का अंतिम मोल चुकाया। दधीचि ने हड्डियों का दान किया। शिवि ने अंग काटकर व्रत का निर्वाह किया।

भारतीय संस्कृति में दान को महत्त्व है पर उसमें सत्पात्र दान का ही स्वीकार किया गया है। अनुपयुक्त अवसर पर तथा अपात्र को दान देने से कोई फल मिलता नहीं है। गीता के १७ वें अध्याय में यह स्पष्ट किया है। गीता में सात्विक, राजस, तामस तीन प्रकार के दान हैं। उसमें सात्विक सर्वोत्तम दान है। कर्ण अपने समय का एक अपूर्व दानी था। उसकी दानशीलता ही उसका आदर्श बन गई थी। इसी आदर्श को उपस्थित करके वि ने अपनी सजग सांस्कृतिक चेतना का प्रमाण दिया है।

भारतीय संस्कृति का मूल तत्त्व त्याग, प्रेम, सदाचरण है। कर्ण के चरित्र में

---

१८. रश्मिरथी, दिनकर, द्वि. संस्करण, पृ.५४।

यह पाया जाता है । कर्ण सदाचारी था । उसका एक मात्र उद्देश्य अर्जुन का वध करना था । उसने अपने उद्देश्य की पूर्ति में असत्, अधर्म, अन्याय, छल , कपट आदि को साधन नहीं बनाया । कर्ण के चरित्र का सब से भूषण सदाचार है । कर्ण को विविध कठिन परिस्थितियों का सामना करना पडा । वही ही अग्नि-परीक्षाएँ देनी पडीं , पर उसने शील व सदाचार नहीं छोडा ।

जीवन का आदर्श ( कुरुक्षेत्र )

युधिष्ठिर -

भारतीय संस्कृति में त्याग, तप , बलिदान का अत्यधिक महत्त्व है । युधिष्ठिर भारतीय संस्कृति के उच्च आदर्श थे । वे एक महान आध्यात्मिक व्यक्ति थे । शांति-प्रिय , पुण्यात्मा , आदर्शवादी, सत्यवादी , तप , त्याग तथा बलिदान में विश्वास रखनेवाले भारतीय संस्कृति के प्रतीक थे । भारतीय संस्कृति में परोपकार, गर्व का त्याग इन महान गुणों को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है । युधिष्ठिर के जीवन का व्रत परोपकार ही था । गर्व उन्हें छू न सका था । उनके मन में विश्व बंधुत्व , विश्व शांति तथा मानवता की भावनाएँ थी । युधिष्ठिर सच्चे प्रजावत्सल नृप थे । वह धर्मात्मा, ज्ञानी, प्रतिभा-वान तथा कर्तव्यपरायण महान नृप थे । उनमें परम साहस था । वे विद्वान, ज्ञानी तथा विचारवान थे । इस प्रकार युधिष्ठिर हमारी संस्कृति के प्रतिनिधि हैं । उनमें भारतीय संस्कृति की एक शक्तिशाली धारा विद्यमान है । उनकी साधना, तपस्या और अगाध चिंतन भारतीय संस्कृति से परिमार्जित तथा उसी की पोषक है ।

भीषण नर-संहार देखकर युधिष्ठिर का मन आत्मग्लानि से भर उठता है । वे दुर्योधन को अपने त्याग, तपस्या और मन:शक्ति के बल पर जीतने का प्रयास करते हैं । उनकी यह विचारधारा भारतीय संस्कृति के आदर्शों को प्रकट करती है।

'' जानता कहीं जो परिणाम महाभारत का
तन बल क्रोड में मनोबल से लड़ता ।
तप से सहिष्णुता से, त्याग से सुयोधन को
जीत नई नींव इतिहास की में धरता । '' [१९]

युधिष्ठिर के साथ भीष्म पितामह का समग्रचिंतन भारतीय संस्कृति की विचारधारा से ओतप्रोत है । भारतीय संस्कृति एक विशाल दृष्टिकोण लिए हुए है । वह सिर्फ भारतीयों की नहीं बल्कि विश्व के सभी प्राणियों के हृदयों में दया और प्रेम का अनश्वर भाव निर्माण करना चाहती है । भारतीय संस्कृति के इस दृष्टिकोण को प्रकट करते हुए भीष्म कहते हैं--

'' मैं भी हूँ सोचता, जगत से,
कैसे उठे जिघांसा ।
किस प्रकार फैले पृथ्वी पर
करुणा, प्रेम अहिंसा । '' [२०]

दिनकर के इस महाकाव्य की आधारभूमि प्राचीन है, परंतु कवि ने सभ्यता और संस्कृति के जिन आदर्शों का चित्रण इस महाकाव्य में किया है वह नवीन है।

भीष्म पितामह परम तेजस्वी थे , मृत्यु को उन्होंने जीत लिया था, यंत्रणा को जीत चुके थे । '' मृत्यु पर विजय प्राप्त करना भारतीय संस्कृति का एक प्रमुख सिद्धांत है । जिसका उद्धरण इस प्रकार है --

'' आई हुई मृत्यु से कहा अजेय भीष्म ने कि
योग नहीं जाने का , अभी है उसे जानकर ,

---

१९. कुरुक्षेत्र, दिनकर , पृ. ८ ।
२०. वही, पृ. ३३ ।

रुकी रहो पास कहीं, और स्वयं लेट गए ।
बाणों का शयन, बाणों का ही उपाधान कर ।''[२१]

भारतीय संस्कृति में ब्रह्मचर्य के पालन का महत्त्व है । भीष्म ब्रह्मचारी थे। एक ब्रह्मचारी के लिए कठोर नियमों का पालन करना पड़ता है । भीष्म ने मधुर भावों को अपनी ओर आने से सदा रोका , क्योंकि ब्रह्मचारी के लिए ये घातक हो सकते थे ।

'' जीवन के अरुणाभ प्रहर में कर कठोर व्रत धारण
सदा-स्निग्ध भावों का यह जन करता रहा निवारण । ''[२२]

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है ' कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचनम्।' भीष्म का युधिष्ठिर को यही दिया हुआ उपदेश उनके महान् चरित्र का परिचायक है । भीष्म परमधर्म उसको समझाते हैं कि निष्काम भाव से ,संसार से निर्लिप्त रहकर , कर्मकरता, दूसरों के लिए जीना तथा दूसरों के लिए मरना परमधर्म है ।

इस प्रकार कुरुक्षेत्र में कवि ने भारतीय संस्कृति के आदर्श भीष्म , युधिष्ठिर का आदर्श धरातल पर चित्रण किया है ।

निष्कर्ष :

दिनकर की कविताओं में भारतीय संस्कृति की महत्ता और उसकी विशेषताओं का अभिव्यंजन है । दिनकर ने अपने साहित्य में भारतीय संस्कृति की प्रतिष्ठा एक विशिष्ट उद्देश्य से की है । वे वर्तमान युग के सम्मुख अतीत को रखकर अतीत से प्रेरणा प्राप्त करने का संकेत देते हैं । अतीत की ओर आसक्ति से देखने की प्रवृत्ति पर छायावादी प्रभाव पाया जाता है । oc

२१. कुरुक्षेत्र, दिनकर , पृ. ८ ।
२२. वही, पृ. ६२ ।